PUNE RESEARCH SCHOLAR ISSN 2455-314X
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY JOURNAL VOL 3, ISSUE 5

बिदग्घमाघवम् नाटक में अंगीरस एवं अंग रस योजना

डॉ. विश्वम्भर प्रसाद
(एसोसिएट प्रोफेसर)
ईलम विश्वविद्यालय
सिक्किम **भारत**

डॉ. कृष्ण कान्त
(शोधकर्ता)
ईलम विश्वविद्यालय
सिक्किम **भारत**

प्रस्तावनाः

''विदग्घमाद्यवम्'' नाटक के प्रणेता ''श्री रुप गोस्वामी जी'' ने नाटक में अंगीरस एवं अंगरस का प्रयोग बड़े ही सरस व सुन्दर ढंग से किया है। किसी भी रुपक में अंगीरस ही उसकी पूर्णता का कारण होता है। कवि अपनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा के द्वारा महारुपकों में अन्यान्य तत्वों के साथ अंगीरस की योजना करता है। यदि गंभीरतापूर्वक अनुशीलन किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है कि रुपक का आत्मभूत तत्व अंगीरस ही होता है। उसी की संसिद्धि के लिए सहदय कवि नाटकादि में शब्द, अर्थ, गुण, रीति एवं अलंकारादि की योजना करता है। कवि की ये समस्त योजनायें प्रायः अंगीरस के निर्वाह के लिए होती है। यहाँ तक कि रुपकों में जिन अंगरसों की योजना रहती है वे भी प्रथक सत्ता रखते हुए भी अंगीरस के व्यंजकों में सहायक होते हैं।

कवि रुपकों की रचना को ध्यान में रखते हुए यह सुनिश्चित करता है कि उसे किस रस की प्रधान्येन अन्विति करती है और यह वर्ण्य विषय के आधार पर अंगीरस को दृष्टि में रखते हुए नाट्य निर्माण में प्रवृत्त होता है। अतएव सम्पूर्ण रुपक में वह भी रस के अनुकूल आलम्बन, उद्दीपन, अनुभाव, सात्विक भाव एवं संचारीभावों के द्वारा स्थायीभावों को संयोजित करता है, जोकि अंगीरस की योजनाओं में सहायक सिद्ध हो और रस की अभिव्यक्ति करा सके।

शब्द कुंजी :— अहीनों जितैरस्मि, पक्ष्मलाक्ष्याः, वम्भ्रमीति।

परिचय :–

''विदग्धामाघवम्'' नाटक के प्रणेता ''श्री रुप गोस्वामी जी'' उत्कृष्ट विद्धान के रुप में संस्कृत साहित्य के रंग मंच पर अवतीर्ण हुए, जिन्होने ''विदग्घमाघवम्'' नाटक में अंगीरस एवं अंग रस योजना को उत्कृष्ट ढंग से परिभाषित करते हुए इसके विभिन्न आयामों पर प्रकाश डाला है। 'विदग्घमाघवम्' उज्जवल श्रंगार रस से व्याप्त है। श्रंगार की दृष्टि से आलम्बन भगवान् श्रीकृष्ण है एवं आश्रय विभाव भगवती राधा है,। उद्दीपन विभाव वंशीध्वनि, मलयानिल, चन्द्रोदय, भ्रूविक्षेप आदि हैं। श्रंगार, रससिक्त कुछ उदाहरण दृष्टव्य है –

श्री कृष्ण की राधा के प्रति उक्ति –

''अहीनो भ्रूगुच्छः कुटिलवलनैर्वेष्टययति मां
खरस्ते नेत्रान्तो मयि वितनुते ताडनाविधिम्।
प्रलम्बः केशान्नतो हरति हठवृत्त्या मम बलं
मजदि्भस्त्वामेतैरहमिह जितैरस्मि विजितः।।[1]

तुम्हारा भ्रूगुच्छ रुपी कालिय नाग अपने कुटिल लपेटों से मुझे लपेट रहा है। कटाक्षरुपी धेनुक मेरे ऊपर प्रहार करने का उपक्रम कर रहा है। वेणी रुप प्रलम्ब हठपूर्वक मेरी शक्ति को छीन रहा है। इस प्रकार यहाँ पहले मेरे द्वारा जीते गये कालिय प्रभृति असुर इस समय तुम्हारी सेवा करते हुए मुझको जीत लिये है।

कहने का आशय यह है कि कालिय, धेनुक और प्रलम्ब नामक असुरों को कृष्ण ने पराजित किया था। वे सम्प्रति कृष्ण से बदला लेने के लिए राधा के भ्रूगुच्छ में आकर कृष्ण को पराजित कर रहे हैं।

श्रंगार रस में छहो ऋतुओं का वर्णन, सूर्योदय, चन्द्रोदय, जलविहार, वनविहार, चन्दनादि लेप, आभूषण धारण व जो कुछ ग्राहय वस्तु है, उसका वर्णन श्रंगार रस में होता है। राधा के कटाक्ष बाण ने कृष्ण के हदय को विद्ध कर दिया जिसका वर्णन कृष्ण स्वयं निम्न श्लोक के माध्यम से कर रहे हैं कि राधा की रुपमाधुरी ने हमको धायल कर दिया –

''प्रमदरसतरंगस्मेरगण्डस्थालायाः
स्मरधनुरनुबन्धिभ्रूलतालास्यभाजः।
मदकलचलभृंगीभ्रान्तिभंगीं दधानो
हृदयमिदमदाङ्क्षीत् पक्ष्मलाक्ष्याः कटाक्षः।।[2]

घतूरे के रस की लहर से अथवा प्रसन्नता रुपी रस की लहर प्रफुल्लित कपोलस्थलवाली कामदेव के धनुष का अनुकरण करती भ्रूलता के नर्तन से युक्त और प्रशस्त बरौनी युक्त आंखों वाली इस राधा के मतवाले तथा चंचल भौरों की भंगिमा को धारण करने वाले कटाक्ष ने मेरे इस हदय को छेद दिया। अर्थात् राधा का रुप लावण्य कृष्ण के रग–रग में समाहित हो चुका है।

कृष्ण राधा के प्रेम में इतने पगे हैं, निम्न पद्य में इसका सहज रुप देखा जा सकता है –

''पदि्मन्यास्ते सुमुखि परमप्रेमसौरभ्यपूरो
दूरात्सर्पी मदवधि मुदा कृष्णभृंगेण भेजे।
आक्रान्तोऽयं तव नवमुखाम्भोजमाध्वीककपान्
प्रत्याशाभिस्तदवधि रुवन्संभ्रमी बम्भ्रमीति।।[3]
किं च।
''मुक्तानामुपलभ्यमेव कुचयों' सालोक्यमालोक्यते
हित्वा संगमहंसमस्तसुहदां कैवल्यमासेदिवान्।
वैषम्यं तिलमप्यनाश्रितमवतों' सान्द्रामृतस्यन्दिभि
र्मा पूर्ण कुरु तन्वि तूर्णमनपोः सायुज्त्यदानोत्सवैः।।[4]

हे सुमुखि, कमलिनी रुपी तुम्हारे परम स्नेह के सुगन्ध प्रवाह की जो कि मुझ तक दूर से प्रवाहित होने वाले हैं, जब से कृष्ण रुपी भौंरे ने आनन्द से सेवा की हैं, तब से

तुम्हारे नवीन मुख–कमल के मधु को पीने की अभिलाषाआं से गुंजन करता हुआ चक्कर काटने वाला यह आक्रान्त भौंरा धमू रहा है।

कृष्ण कहते हैं कि तुम्हारे स्तनों पर मुक्तओं के लिए प्राप्त करने योग्य सालोक्य रुप मुक्ति को देखकर मैंने सभी मित्रों की संगति को छोड़कर कैवल्य को प्राप्त किया है। तिल भी विषमता का आश्रय नहीं लेने वाले इन दोनों कुचों के बीच सघन अमृत की वर्षा करने वाले सायुज्य रुप आनन्दोत्सवों से मुझे सीध्र पूर्ण करो। अर्थात् मुझको आलिंगन प्रदान करो।

कृष्ण राधप की शोभा के समक्ष हरिणी, कोयल, मयूर की शोभा को एक नहीं समझते। निम्न श्लोकों में श्रृंगार की छटा का अवलोकन करें –

''हरिणोर्विडम्बयसि नेखखेलया
ललितैर्लतापिककुलं कलोक्तिभिः।
शिखिनश्च कुन्तलकलापविभ्रमै–
रिति ते पुरः किमिव मे वनश्रिया।।[5]

हे राधे, तुम नेत्र की क्रीडा से हरिणी की, ललित सुन्दर वचनों से कोयल समूह की ओर केशकलापों के विलासों से मयूरों के समूह की बिडम्बना कर रही हो। अतः तुम्हारे समक्ष वन की शोभा से हमें क्या प्रयोजन है?

अर्थात् वन की शोभा तो तुम्हीं में प्रकट हो रही हो।

अपि च,

''कर्णोत्तंसितरक्तपंकजजजुषो भृंगीपतेर्झंक्रिया
भ्रान्तेनाद्य दृगञ्चलेन दधती भृंगीवलीविभ्रमम्।
त्रासान्दोलितदोर्लतान्तविचलच्चूडाझणत्करिणी
राध व्याकुलतां गतापि भवती मोदं ममाधास्यति।।[6]

श्रीकृष्ण कहते है राधे! प्रेम लक्ष्मी किसे बलपूर्वक नहीं हर लेती अर्थात् सभी प्रेम के वशीभूत हो जाते है –

हे राधे! तुम्हारे कान के आभूषण बने रक्तकमलों में रहने वाले भ्रमर के गुंजार से चंचल दृगचंल से भ्रमर समूह के विलास को धारण करती हुई, डर से हिलती हुर्द दोनों भुजलताओं के बीच गतिशील चूडामणियों के झंकार को उत्पन्न करने वाली तुम व्याकुल होकर मुझे आनन्दित कर रहा हो अर्थात् भ्रमर के डर से घबड़ाई हुई तुम्हें देखकर मुझे अपूर्व आनन्द की अनूभूति हो रही है।

राधा भी कृष्ण की रुपमाधुरी पर पूर्ण रुप से आकृष्ट हो रही हैं और कृष्ण को कटाक्ष से देखकर मन ही मन कह रही हैं कि कृष्ण के रुपमाधुर्य ने मेरी धारणाबुद्धि को मदमस्त बना दिया! निम्न श्लोक में रुपमाधुर्य का अवलोकन करें –

''नवमनसिजलीलाभ्रान्तनेत्रान्तभाजः
स्फुटकिसलयभंगीसंगिकर्णांचलस्य।
मिलितमृदुलमौलेर्मालया मालतीनां
मदयति मम मेधां माधुरी माधवस्य।।[7]

नवीन कामदेव की लीला से भ्रान्त नयन प्रान्तवाले, विकसित किसलय की भंगिमा में आसक्त कर्णप्रदेश और मालती–पुष्पों की माला से विभूषित मस्तक वाले कृष्ण की माधुरी मेरे मन को मदमस्त बना रही है। अर्थात् बुद्धि की मदमरती में कृष्ण की शोभा को भूलना असंभव है।

कृष्ण राधा की सखी ललिता से राधा द्वारा की गयी कामकलाओं की प्रगल्भता का वर्णन कर रहे हैं –

''कठोराग्रैर्भूयो व्रणमजनयद्वक्षसि नखै–
र्बलादक्रामन्ती व्यकिरदपि मां पिच्छरचनाम्।
विकृष्य च्छिन्नाङ्.गीमकृतवनमालां च रुचिरा–
मिदानीं जानीते न किमपि पुरस्ते प्रियसखी।।[8]

राधा ने अपने कठोरनख की नोकों से बार–बार मेरी छाती में घाव कर दिया है। बलपूर्वक झपटकर मेरे मोरपंखके मुकुट को विखेर दिया, सुन्दर वैजयन्ती माला को जो टूट गयी है, खींचकर इस प्यारी सखी ने विखेर दिया हैं, तुम्हारे सामने कुछ नहीं जानती। अर्थात् सब कुछ करके भी अनजान बनी बैठी है।

श्रृंगार का एक और बहुत सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत है। ललिता केलिकुंज की रचना कर रही है तो राधा कहती है –

''रचय वकुलपुष्पैस्तोरणं केलिकुञ्जे
कुरु वरमरविन्दैस्तल्पमिन्दीवराक्षि।
उपनय शयनान्तं साधु माध्वीकपात्रीं
सहचरि हरिरद्य श्लाघतां कौशलं ते।।[9]

हे कमललोचने! केसर के फूलों से वंचित केलिकुंज में वन्दन वार (शोभाद्वार) बनाओ। कमल के फूलों से सुन्दर शय्या की रचना करो और शयया के समीप ठीक से सुरापात्र ले जाओ। हे सहचरि आज कृष्ण तुम्हारी कुशलता की प्रंशसा करें।

इस प्रकार विदग्धमाधवम् नाटक में श्रृंगार चेष्टाओं का सुन्दर व सम्यक् प्रयोग किया गया है।

विप्रलम्भ श्रृंगार

विप्रलम्भ श्रृंगार में नायक नायिका का अनुराग तो अति प्रगाढ़ रहता है परन्तु प्रियमिलन नहीं होता इसलिए दोनों एक दूसरे के विरह में सन्तप्त रहते हैं।

विदग्धमाधवम् नाटक में राधा कृष्ण की रुपमाधुरी पर आकृष्ट होकर उनके विरह में सन्तप्त हो रही हैं –

''तस्योरस्तटमण्डलं धृतिनदीरोधक्रियापण्डितं
वक्त्रेन्दुः कुलधर्मपंकजवनीसंकोदीक्षावृती।

दोर्यूपौ नितरामुदञ्चितव्रीडाभिचाराध्वरौ
हा कष्टं निखिलंगिला सखि दृशोर्भंगी भुजंगी तु सा।।[10]

उसका वक्षःस्थलरुपी तटसमूह धैर्यरुपी नदी की बाढ को रोकने के व्यापार में निपुण है। मुखरुपी चन्द्रमा कुलधर्मरुपी कमलवन के संकोच में दीक्षित हैं। उसकी दोनों भुजाएँ लज्जा के अभिचार यज्ञ के यूप हैं। हाय दुख है कि उसकी आंखो की भंगिमारुपी सर्पिणी समस्त वस्तु को निगल जाने वाली है।

अभिचार

शत्रु के वध के उद्देश्य से किया गया यज्ञ अभिचार याग कहलाता है यूप यज्ञ में वलि–पशु को बांधने के लिए गाडा गया खम्भा यूप कहलाता है।

वैसे तो राधा धीरज रखने वाली कही जाती हैं किन्तु कृष्ण के वियोग में उद्विग्न हो रही हैं और अपनी सखी विशाख से कहती है सखी उस धूर्त ने मुझे गुणहीन बना दिया क्योंकि कृष्ण का अंग–प्रत्यंग वक्षःस्थल, मुख भुजाएँ, नेत्रभंगिमा ये सब राधा के धीरज, कुलधर्म, लज्जा विवश होकर भी कृष्ण से अपना पीछा नहीं छुडा सकती। वह कृष्ण की रुपमाधुरी पर लुट कर उसके प्रेमजाल में फंसकर रह गयी है कि उससे बाहर निकलना अंसभव है।

जब विशाखा राधा से उसकी चिन्ता व अस्वस्थता का कारण पूछती हैं तो राधा कहती हैं –

उन्मत्ते, गहने एतस्मिन्नत्याहितानलकुण्डे त्वमेव मम प्रक्षेपणी।

अर्थात् पगली इस गम्भीर अनर्थकारी आग के कुण्ड में तुम्हीं ने मुझे फेंका है। विशाखा कहती है किस प्रकार तब राधा कहती हैं झूठ बोलने वाली चित्र में विद्यमान कामुक का साथ देने वाली ठहरो अभी बताती हूं।

"वितन्वानस्तन्वा मरकतरुचीनां रुचिरतां

पटान्निठक्रान्तोअभ्द् धृतशिखिशिखण्डो नवयुवा।
भ्रूवं तेन क्षिप्त्वा किमपि हसतोन्मादितेः
शशी वृत्तो वह्निः परमहह वह्निर्मन शशी।।[12]

शरीर से मरकत मणि की कान्तियों की छटा को फैलाता हुआ मयूर–पुच्छ धारण करने वाला नवयुवक पर्दा से निकला है। और भ्रूविक्षेप करते हुए उसने मेरी बुद्धि को उन्मप्त बना दिया है। खेद है कि मेरे लिए चन्द्रमा अग्नि बन गया है और अग्नि चन्द्रमा बन गया है।

कहने का आशय यह है कि विरह दशा में कामोद्दीपक होने के कारण शीतांशु चन्द्रमा भी विरहिणी को अधिक सन्तप्त करता है। चन्द्रमा आग के समान सन्तापकारक है और आग चन्द्रमा के समान शीतल है। राधा के हदय में विरह की आग निरन्तर जल रही थी जो सामान्य आग की अपेक्षा अधिक प्रचण्ड और असह्य थी। अतः सामान्य आग उतनी सन्तापप्रदायिनी नहीं थी जितनी की विरह की आग। अतएव शान्तिप्रद होने के कारण अग्नि ही मेरे लिए चन्द्रमा है और मुझे अग्नि में प्रवेश करना चाहिए।

''मां परिहरति मुकुन्दस्तदपि दुराशा विरोधिनी दहति।
मम सखि गंभीरनीरा शरणं भगिनी कृतान्तस्य।।[12]

राधा अत्यधिक व्याकुल होकर कहती है कृष्ण मेरी उपेक्षा करते हैं, कृष्ण मुझे छोड़ रहे हैं, फिर भी मेरी विरोधिनी दुराशा मुझे जला रही है। उनके न चाहने पर भी मैं उन्हें चाह रही हूँ, हे सखि यमराज की बहिन गंभीर जलवाली यमुना ही मेरी शरण हैं।

अर्थात् कृष्ण के वियोग में व्याकुल होकर राधा जी यमुना जी में समाहित हो जाना चाहती हैं। कृष्ण के वियोग को नहीं सहन कर सकती हैं।

विप्रलम्भ का एक सुन्दर व सहज उदाहरण द्रष्टव्य हैं।

''नालीकिनीं निशि घनोत्कलिकामशंक
क्षिप्त्वा वृतीरतनुवन्यगजः क्षुणन्ति।

अत्रानुरागिणि चिरादुदितेऽपि भानौ
हा हन्त किं सखि सुखं भविता वराक्याः।।[13]

राधिका हीनभावना से ग्रसित होकर कहती हैं – सघन कलिका वाली कमलिनी को रात में अशंक भाव से घेरा डालकर कामदेव रुपी जंगली हाथी यदि चूर–चूर कर देताहै तो प्रेमी सूर्य के देर से आने पर (उगने पर) उस अभागिन कमलिनी को क्या सुख मिलेगा?

कहने का तात्पर्य यह है कि कमलिनी सूर्य की प्रियतमा है। प्रातः काल कमल कलिका अपने प्रियतम सूर्य का अनुपम स्पर्श पाक विकसित हो जाती है। यदि रात में ही उस कली को जंगली हाथी चूर्ण कर दे तो प्रायः सूर्य के उगने से उसे क्या प्रयोजन? राधिका कृष्ण से प्रेम करती है किन्तु कामदेव रात्रि में उसे कृष्ण के विरह में असह्य दुःख दे रा है। यदि कामयातना को न सहकर कहीं वह अपने प्राणों से हाथ धो बैठी तो कृष्ण के देर से आने का क्या प्रयोजन?

यहाँ पर विप्रलम्भ का मार्मिक चित्रण सहज की देखा कर सकती है –

शिशिरय दृशौ दृष्ट्वा दिव्यं किशोरमितीक्षितः
परिजनगिरां विश्रम्भात्वं विलासफलांकितः:
शिव–शिव कथं जानीमस्त्वामवक्रधियो वयं
निविडवडवावह्निज्वालाकलापविकासिनम्।।[14]

कृष्ण को लक्ष्य कर उलाहनापूर्वक अपने आप कहती है – दिव्य किशोर को देखकर अपनी–अपनी आंखो को शीतल करो, इस प्रकार के वचनों के विश्वास से विलासफल से चिह्नित तुमको मैंने देखा है, शिव, शिव हम लोग सरल हदय के हैं – अतः बढ़े हुए बडवानल को की ज्वाला के समूह को फैलान वाले तुमको हम लोग कैसे जान सकते हैं? अर्थात् हम लोग भोली–भाली तुम्हारे विरह की आग में जल रही हैं। तुम चंचल हो, एकमात्र मेरे दुःख का कारण हो।

(5) सहायक ग्रन्थानुक्रमणिका :–

1. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 3/42
2. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 2/51
3. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 3/50
4. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 3/51
5. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 5/39
6. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 5/44
7. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 6/16
8. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 6/35
9. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 4/24
10. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 2/45
11. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 2/3
12. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 2/43
13. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 3/13
14. विदग्धमाधवम् की भूमिका से – 2/23